विकलांग-दिव्यांग-विमर्श

डॉ. रेखा दुबे

लेखक व प्रकाशक की लिखित अनुमति के बिना इस पुस्तक को पूरी तरह अथवा आंशिकतौर पर या पुस्तक के किसी भी अंश की फोटोकॉपी, रिकॉर्डिंग अथवा इलेक्ट्रॉनिक अथवा ज्ञान के किसी भी माध्यम से संग्रह व पुनः प्रयोग की किसी भी प्रणाली द्वारा इस पुस्तक का कोई भी अंश प्रेषित, प्रस्तुत अथवा पुनर्स्थापित न किया जाए। प्रस्तुत पुस्तक में लेखक के अपने विचार और सामग्री है, जिससे प्रकाशक का कोई लेना-देना नहीं है।

Ekkisvin Sadi ka Navya Vimarsh : Viklang/Divyang-Vimarsh

Ed. by

Dr. Rekha Dubey

I.S.B.N. : 978-81-8135-163-0

© डॉ. रेखा दुबे

मूल्य : 550.00 रुपये

प्रथम संस्करण : सन् 2021

प्रकाशक : **पंकज बुक्स**

109-ए, पटपड़गंज गाँव, दिल्ली-110091

दूरभाष : 8800139684, 9312869947

वितरक : भावना प्रकाशन, दिल्ली

आवरण : नीरज

शब्द संयोजक : पंकज ग्राफिक्स, दिल्ली-110092

मुद्रक : राधा ऑफसेट, दिलशाद गार्डन, दिल्ली।

Published by :

Pankaj Books,

109-A, Patparganj Village, Delhi-110091, INDIA

E-mail : bhavnaprakashan@gmail.com

ब्रह्मांड के विकलांग पोषक भगवान शंकर

-राधाकृष्ण पाठक 'अतीत' :

पौराणिक गाथाओं में विकलांग विमर्श

-डॉ. फूलचंद महंत : 1

फला साधना में दिव्यांगता बाधित नहीं

-विनोद मिश्र "सुरमणि" : 1

विकलांगों की समस्याओं की प्रासंगिकता

-डॉ. श्रद्धा हिरकने : 1

धार्मिक ग्रंथों एवं हिन्दी साहित्य में विकलांगता

-डॉ. बलवाऊ प्रसाद निर्मलकर : 12

विकलांगता कोई अभिशाप नहीं

-डॉ. प्रीति प्रसाद : 14

कहानी संग्रह "हौसला" में मानवीय चेतना

-सृजन महंत : 14

विकलांगों के जीवन पर सामाजिक परिवेश का प्रभाव : हौसला कहानी संग्रह के संदर्भ में

-बेला महंत : 15

कथा साहित्य में विकलांग विमर्श-संदर्भ : "विकलांग विमर्श की कहानियाँ"

-डॉ. राजेश कुमार मानस : 15

तीसरा पहिया की व्यथा-कथा

-डॉ. क्रांति कुमार सिन्हा : 16

तुलसीदेवी तिवारी की कहानियों में विकलांग विमर्श

-डॉ. चन्द्रिका चौधरी : 16

एक बीघा प्यार : निशक्त हौरा सशक्तों के लिए मिसाल

-बोधिजा : 17

सफर की धूप : एक समीक्षा

-डॉ. नेहा कल्याणी : 18

देह अगर विकलांग हुआ तो....

-कल्पना कौशिक : 18

मीडिया में विकलांग विमर्श

-प्रो.डॉ. सुरेश माहेश्वरी : 19

हिन्दी सिनेमा में विकलांगों की भूमिका (बरफी के संदर्भ में)

-डॉ. शारदा प्रसाद : 20

हिन्दी फिल्मों में विकलांग चरित्र

-तुलसी देवी तिवारी : 20

सफर की धूप : एक समीक्षा

डॉ. नेहा कल्याणी

स्त्री, दलित और जनजातीय विमर्श के बाद 21वीं सदी के प्रथम दशक के रूप में विकलांग-विमर्श की आहट हिन्दी साहित्य के द्वार पर सुनाई दे रही है। जाति और लिंग भेद से दूर शुद्ध मानवतावादी दृष्टि पर आधारित यह ऐसा अभिनव विमर्श है जो किसी मानव को जन्म से या जीवनपर्यंत किसी दुर्घटना या विकार से कभी भी हो सकता है उसके लिए समाज में जन-जागृति लाना और उनके समग्र विकास हेतु जनता, शासन और समाजसेवी संस्थाओं में सामंजस्य का सूत्रपात करना आज के समय की माँग है। हमारे देश में ही नहीं, पूरे विश्व में विकलांगों की संख्या 15 प्रतिशत है लेकिन विडम्बना ही कही जायेगी कि उनके पुनर्वास की समस्या आज भी मुँहबाए खड़ी है।

"सफर में धूप तो होगी, जो चल सको तो चलो।
सभी हैं भीड़ में तुम भी, निकल सको तो चलो।।"

'सफर की धूप' केवल एक आत्मकथा ही नहीं एक ऐसा दस्तावेज है शारीरिक रूप से सामर्थ्यहीन होने पर भी जो जिन्दगी की अंधेरी राहों को तोड़कर चुनौतियों की मंजिलों तक पहुँचने का हुनर सिखाता है। ऐसी मंजिलें जिन्हें खुली आँखों वालों के लिए भी आसान नहीं, वहाँ स्याह अँधेरे में डूबी राहों के मुसाफिर का पहुँचना कितना हैरतअंगेज हो सकता है, इसका सहज संकेत यह पुस्तक दे जाती है।

कहते है या कि भगवान के खेल निराले होते हैं, प्रतीत होता है कि आँखों वाली इस दुनिया को एक नयी दृष्टि देने के लिए ही उसने डॉ. घनश्याम आसुदानी को दृष्टि से वंचित रखा, ताकि वे जिन्दगी की राह पर चलते हुए निराश और थके-हारे मुसाफिरों की बंद हुई राहों को 'सफर की धूप' से रोशन कर सकें।

साहित्य के क्षेत्र में बहुत-सी आत्मकथाएँ मैंने पढ़ी है-साहित्यकारों, राजनेताओं, खिलाड़ियों, कलाकारों, विद्वानों, इंजीनियरों। पर पहली बार एक ऐसे शख्स की आत्मकथा मेरे हाथ में है, जिसने शब्दों को देखा नहीं-सुना है, ध्वनि को छुआ है, रंगों को महसूस कर भावनाओं की गंध को आत्मसात् किया है।

डॉ. आसुदानी की इस आत्मकथा में उनके बचपन से लेकर आज तक के सफर का सजीव चित्रण हुआ है। इस चित्रण में मुखरता के साथ-साथ आत्मपरीक्षण के बेबाक निष्कर्ष भी हैं जो 'सफर की धूप' की सबसे बड़ी विशेषता है। परिवार की स्थिति, बचपन का मासूम अल्हड़पन, दादा-दादी का स्नेहमय सान्निध्य, पुत्र की दृष्टिहीनता से वेदना से बिलखता परिवार, इलाज के लिए पिता की जी-तोड़ कोशिशें, रिश्तेदारों-परिचितों की संकुचित मानसिकता, दुनियादारी का कठोर यथार्थ, अनजानों के सहज स्नेहिल सहयोग से इंसानियत के जिन्दा होने का एहसास, जीवन में आगे बढ़ते हुए पग-पग पर दृष्टिहीनता के कारण समस्याएँ, अपेक्षा-उपेक्षा, रोष आदि भावों की मार्मिक अभिव्यंजना, अंतरंग रिश्तों की कोमल संवेदनाओं की तारें पुस्तक में समाहित हैं। शारीरिक रूप से अक्षम होने पर भी जीने की अदम्य इच्छा,जीवन में आने वाले संकटों का डटकर मुकाबला करने का दृढ़ निश्चय तथा कभी भी पीछे मुड़कर न देखने का आत्मविश्वास, जीवन जीने की परिपक्व दृष्टि आदि सकारात्मक तथ्य इस आत्मकथा के प्रसंगों से दृष्टिगोचर होते हैं।

जीवन के इस सफर में डॉ. आसुदानी कभी डगमगाये, कभी गिरे, कभी रोये, कभी खुशी में झूमे, तो कभी मन में फूट-फूटकर रोये उन सबका स्मरण कर जीवन के इस पड़ाव पर जो सुख मिला, वही इस पुस्तक में उनके अनुभव की वस्तु है।

विकलांग जिस पीड़ा को भोगता है, उसकी अनुभूति मीरा के शब्दों में 'घायल की गति घायल जाने' की तरह है। लेकिन उन आत्मीयों एवं स्नेहिल जनों की पीड़ा को विस्मृत नहीं किया जा सकता, जो उस पीड़ा को महसूसते ही नहीं अपितु उनकी संघर्ष यात्रा में हर-पल, हर क्षण सहभागिता का दायित्व भी निभाते हैं। इसका महत्व कहीं-कहीं पीड़ित से भी ज्यादा हो जाता है क्योंकि अधिकांश विकलांग सहभागिता के अभाव में या तो यथास्थिति से समझौता करके दयनीय जीवन जीने के लिए मजबूर हो जाते हैं या फिर आत्महत्या का आश्रय ग्रहण कर लेते हैं।

इस आत्मकथा में उन्होंने अध्यापक बनने में नेत्रहीनों के लिए आने वाली बाधाओं का वर्णन करते हुए लिखा है कि रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार, फिजूल के सवालों द्वारा योग्य होने पर भी केवल नेत्रहीनता के कारण उन्हें अयोग्य सिद्ध

करने का प्रयास कर उन्हें मानसिक रूप से असक्षम साबित [illegible]ता। नौकरी पाने की राह में आज चार प्रमुख समस्याएँ है–1. जाति 2. पैसा 3. भाई-भतीजावाद या सिफारिश 4. विकलांगता। शिक्षा के क्षेत्र में अपनी पसन्द की नौकरी पाने की चाह में निरन्तर साक्षात्कार देते हुए उन्होंने महसूस किया कि नौकरी पाने की राह में सबसे कम महत्वपूर्ण बात है तो वह है-शैक्षिक योग्यता। उत्तम श्रेणी के गुण व गुणवत्तापूर्ण डिग्रियाँ होने पर भी उनका बेमानी होना सिद्ध होता है।

इस आत्मकथा का गंभीरतापूर्वक विवेचन करने से ज्ञात होता है कि क्या कोई भी व्यक्ति स्वेच्छा से इस विकलांगता को चुनता है। कभी नहीं यह तो एक ऐसी परिस्थिति है जो उसे विधाता द्वारा मिलती है पर फिर भी वह बिना किसी शिकवे शिकायत के इस स्थिति को स्वीकार कर लेता है। वास्तव में विकलांग होना अपने आप में न तो कोई अभिशाप है और न ही कोई न्यूनता। यह तो केवल एक ऐसी पीड़ा मात्र है, जिससे किसी न किसी रूप में सभी ग्रस्त होते है। वास्तविक रूप में विकलांग तो मनुष्य की मानसिकता है, जिसके मूल में व्याप्त है शोषण। अतः विकलांगता और शोषण का तो मानो चोली-दामन का साथ है।

समाज तो केवल शोषण करने के अवसर ढूँढता है पर ऐसे में अगर कोई साथ देता है तो क्या है उसके मन की हिम्मत। जो समाज निरन्तर हाथ की रोटी तक छीन लेने को कमर कसे रहता है, क्या ऐसा समाज विकलांगों को सम्मानपूर्वक जीने का अवसर देगा? सवाल शिक्षा का हो, रोजगार का हो या सामाजिक भागीदारी का, मूल बात यह है कि हमारा समाज विकलांगों को अपना हिस्सा समझने को ही तैयार नहीं है। उन्हें निरुपयोगी सामान की भाँति घर के एक कोने में डाल दिया जाता है। सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समानता, पूर्ण सामाजिक भागीदारी, समान अधिकारों की प्राप्ति आदि केवल विकलांगों के लिए असम्भव सपने है और है राजनीति के आकाओं तथा समाज के ठेकेदारों की बातें...केवल बातें।

'अत्याचार करने वाले से सहने वाला ज्यादा गुनहगार होता है।' इस पंक्ति को अपने जीवन के सिद्धान्तों में गिनने वाले डॉ. अग्रवाल ने शारीरिक रूप से अक्षम होते हुए भी बचपन से ही कभी किसी गलत परिस्थिति के आगे समझौता नहीं किया। जब-जब भी समाज ने उनके अधिकारों के दायरे को बाँधने की कोशिश की उन्होंने उसका डटकर विरोध किया। इसके विपरीत अगर देखा जाये तो हम सक्षम लोग भी अपने को विवश मानकर कितनी ही गलत परिस्थितियों के आगे सिर झुका देते है।

निष्कर्षतः साहित्य ही समाज में किसी विषय को महत्व व दिशा प्रदान

करता है। प्रकृति, स[illegible] एवं व्यक्ति विकलांगता की जननी है लेकिन विडम्बना यह है कि विकलांग प्रायः उपेक्षित, तिरस्कृत, कौतूहल, हास्य एवं दया के पात्र होते है। कुछ लोग उन्हें दुनिया से छिपाकर रखते है तो कुछ घर के एक कोने में टूटे-फूटे बर्तन की तरह महत्वहीन समझते है। विकलांग को अंग विशेष की न्यूनता के कारण उसके व्यक्तित्व में सदैव हीनता का बोध कराया जाता है और वे विचार करते है कि इस अल्पता की पूर्ति सम्भवतः जीवनपर्यन्त न हो सके। उनके इस उत्थान को प्रतिभा, प्रोन्नति एवं प्रोत्साहन के द्वारा सहज संवेदनशील होकर और आत्मसम्मान की सुरक्षा करते हुए क्रमशः परिष्कार का प्रयास करना समाज का ध्येय होना चाहिए।

सन्दर्भः

1. शिखर की गूंज–डॉ. महावीर अग्रवाल, प्रवीण प्रकाशन, जयपुर
2. कथा साहित्य में विकलांग विमर्श–डॉ. [illegible], अखिल भारतीय विकलांग चेतना परिषद्
3. महाभारत–वेद व्यास
4. रामायण–[illegible]
5. साहित्य अन्वेषण–मासिक पत्रिका सम्पादक डॉ. [illegible], मुम्बई
6. [illegible]
7. [illegible]
8. विकलांगता समस्याएँ व समाधान–2002, [illegible]

-डॉ. नेहा कल्याणी
सहायक प्राध्यापक (हिन्दी विभाग)
पी.जी. [illegible] महाविद्यालय,
जयपुर

देह अगर विकलांग हुआ तो....

कल्पना कौशिक

सामान्यतया कोई भी व्यक्ति जो देखने, सुनने, चलने-फिरने में या मानसिक दृष्टि से कमजोर होता है विकलांग कहलाता है। विकलांगों के लिए अपने दैनिक क्रियाकलाप स्वयं करना तकलीफदेह होता है या वे इनके लिए दूसरों पर निर्भर रहते हैं। चालीस प्रतिशत या उससे अधिक किसी भी प्रकार की अक्षमता वाले व्यक्तियों को शासकीय नियमानुसार विकलांग माना जाता है। आज विकलांगों को समुचित शिक्षा, रोजगार की सही दिशा, समान अवसर और सहयोग देकर सशक्त और आत्मनिर्भर बनाना समाज की आवश्यकता है, जिस तरह समाज में दमित और उपेक्षित दलित वर्ग और स्त्री वर्ग को समाज में उनका उचित और प्रतिष्ठापूर्ण स्थान दिलाने के लिए दलित-विमर्श और स्त्री-विमर्श का उदय हुआ, उसी क्रम में विकलांगों को प्रेरणा, सहयोग और प्रेम देकर नया जीवन देने एवं समाज की मुख्यधारा में लाकर उन्हें उर्ध्वगामी बनाने में विकलांग विमर्श की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है।

इक्कीसवीं सदी के पहले दशक में 'विकलांग विमर्श' तीव्र गति से चर्चा में आया तब विकलांग चेतना को सात्विक रूप मिला। 'विकलांग विमर्श' को सात्विक स्वरूप प्रदान करने वालों में भारत बिलासपुर स्थित अखिल भारतीय विकलांग चेतना परिषद का नामोल्लेख अत्यंत श्लाघा के साथ किया जाना चाहिए। इस संस्था के राष्ट्रीय साहित्य अध्यक्ष डॉ. विनय कुमार पाठक हैं जिन्होंने स्तुत्य कार्य किए हैं। श्री पाठक एवं उनके सहयोगी मित्रों के प्रयास से विकलांगता अब तक संचेतना और विमर्श का विषय बन चुका है।'

विकलांगों को समाज तथा विकास की मुख्यधारा में लाने के लिए यह जानना आवश्यक है कि विकलांगता के विभिन्न प्रकार कौन से हैं तथा विकलांगों के लिए शासन द्वारा क्या प्रावधान किए गए हैं? क्योंकि इन्हें भली-भांति जानकर विकलांगों की रचनात्मकता और कौशल को विकसित कर उनके

अधिकारों के प्राप्ति में सहयोग किया जा सकता है। विकलांगों से संबंधित लक्ष्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से 16 दिसंबर, 2016 को लोकसभा में 'दिव्यांगजन अधिकारी विधेयक, 2016' पारित किया गया जो 21 वर्ष पुराने विकलांग व्यक्ति (समान अवसर, अधिकारों का संरक्षण तथा पूर्ण सहभागिता) अधिनियम 1995 का स्थान लेगा। बदलते परिवेश में विकलांगों की कुछ नई श्रेणियाँ दृष्टिगोचर हुई हैं। अतः केन्द्र सरकार ने 21 प्रकार की अक्षमताओं को विकलांगता की श्रेणी में डाला है। शारीरिक विकलांगता के अन्तर्गत 'कुष्ठ रोग मुक्त व्यक्ति, प्रमस्तिष्क घात, बौनापन, पेशीय दुष्पोषण, तेजाबी आक्रमण पीड़ित, अंधता, निम्नदृष्टि, बधिर, ऊँचा सुनने वाला व्यक्ति, लेरान्-जेक्टोमी या अफेलिया पीड़ित (वाक् और भाषा विकलांगता), बौद्धिक विकलांगता के अन्तर्गत डायसलेक्सिया, डायस ग्राफिया, डायसेकलकुलिया, डायस प्रेमिया और विकासात्मक अफेसिया तथा स्वपरायणता संबन्ध विकार, मानसिक व्यवहार के अंतर्गत मानसिक रूग्णता तथा चिरकारी तंत्रिका दशाएँ जैसे-बहु स्क्लेरोसिस तथा पार्किन्सन रोग, रक्त विकृति के रोग-होमोफीलिया, थैलेसीमिया, सिकलसेल तथा बहु दिव्यांगता को शामिल किया गया है।

विकलांग बच्चों के लिए 6-18 वर्ष की आयु तक मुफ्त शिक्षा के अधिकार की व्यवस्था की गई है। "सुगम्य भारत अभियान" के तहत लोक भवनों में निर्धारित समय के भीतर विकलांगों के अनुकूल बनाने पर जोर दिया गया है। शासकीय प्रतिष्ठानों में आरक्षण तीन प्रतिशत से बढ़ाकर चार प्रतिशत कर दिया गया है। तीन दिसंबर 2015 को सुगम्य भारत अभियान की शुरूआत की गई थी। यह अभियान सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय के अंतर्गत विकलांग सशक्तिकरण विभाग के तहत आरंभ किया गया है।

साहित्य को समाज का आईना कहा जाता है। समाज में जो कुछ घटित होता है उसका प्रतिबिम्ब निश्चित रूप से साहित्य में दिखाई देता है। विकलांग भी समाज का एक अंग है इसलिए विकलांगता संबंधी चिन्तन के बिना साहित्य भी पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकता। विकलांगों के प्रति समाज के लोगों का दृष्टिकोण दो प्रकार का होता है। एक दृष्टिकोण है उपहासात्मक और दूसरा सहयोगात्मक। उपहासात्मक दृष्टिकोण के व्यक्ति किसी व्यक्ति की अक्षमता या शारीरिक विकृति का उपहास करते हैं और उनके मर्म को चोट पहुँचाते हैं। निश्चित रूप से ऐसे लोग असंस्कारी और निष्ठुर प्रकृति के होते हैं परन्तु सहयोगात्मक दृष्टिकोण रखने वाले मनुष्य उदार, संवेदनशील और प्रेरक व्यक्तित्व के होते हैं जो विकलांगों की कठिनाईयों को उन्हीं की तरह समझते हैं, महसूस करते हैं

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संत साहित्य की प्रासंगिकता

संपादक
डॉ. कमलकिशोर गुप्ता

श्री बालाजी प्रकाशन, नागपुर